# 12

# सामाजिक प्रक्रियाएँ

* रेणु शर्मा

## प्रस्तावना

सामाजिक प्रक्रिया शब्द व्यवहार के आवृतीय रूपों का द्योतक है जो सामाजिक जीवन में आमतौर से पाया जाता है। सामाजिक प्रक्रियाओं का एक सर्वाधिक व्यापक व्यवहार पार्क एवं बुर्गीस की, "समाज शास्त्र के विज्ञान का परिचय (इंट्रोडक्शन टु द साइंस ऑफ सोसयोलोजी) (1921) में पाया जाता है। आरंभिक काल की अति प्रभावशाली इस पाठ्य पुस्तक में सामाजिक प्रक्रियाओं के वर्गीकरण एवं विश्लेषण का ही मुख्य वर्णन है। हाल ही के दशकों में समाज शास्त्री सामाजिक प्रक्रियाओं में अधिक रुचि नहीं ले रहे हैं और उनकी रुचि विशेषता संस्थागत और सांस्कृतिक संरचनाओं में व्यवहार का गहन विश्लेषण करने में हो गई है। फिर भी सभी समूहों और समाजों में विद्यमान बड़ी सामाजिक प्रक्रियाओं की जानकारी लेना छात्रों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। बड़ी सामाजिक प्रक्रियाओं का सर्वाधिक प्रचलित वर्गीकरण सहयोग, प्रतियोगिता, संघर्ष, मेल-मिलाप तथा सम्मिलित करने के संदर्भ में किया जाता है।

## सामाजिक पारस्परिक क्रिया

समाज के बारे में अधिकांश विचार सामाजिक संबंधों के दृष्टिकोण से किया गया है। व्यक्ति पिता और पुत्र, मालिक और नौकर, नेता और अनुयायी, व्यापारी और ग्राहक या फिर मित्रों, शत्रुओं और बच्चों आदि के संबंधों के बारे में विचार करता है। ऐसे संबंध समाज की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषताएँ है और इनके परिणाम स्वरूप ऐसा लगता है कि यह उनके स्वरूप की जाँच के लिए प्रत्यक्ष विशेषताओं का विस्तृत अध्ययन है। सामाजिक संबंध सामाजिक विवरण एकत्रित करने के मूलभूत तरीकों के द्योतक होते हैं। संक्षेप में यदि कोई व्यक्ति समाज को देखना चाहता है तो उसे संबंधो की व्यवस्था के रूप में देख सकता है।

सामाजिक संबंधों का विश्लेषण करते समय व्यक्ति इनको जितना प्रकट रूप से सरल मानता है जल्दी ही जटिल मानने लगता है। इनमें दो या अधिक कार्यकर्ताओं के बीच पारस्परिक संविदा में परस्पर बंधन, सम्मान और साधनता साधन शामिल हैं। ये व्यक्तियों के बीच पारस्परिक संबंध बनाने या संबंधों के स्वरूपों के द्योतक हैं।

* रेणु शर्मा, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

किसी भी समाज में सैकड़ों या संभवत: हजारों समाज निर्देशित संबंध होते है। अकेले निकटतम परिवार में लगभग 15* संबंध होते हैं। एक समाज कितने संबंधों का प्रयोग करता है या इस बात पर निर्भर करता है कि वह व्यक्तियों के बीच व्यवहार को परिभाषित करने के लिए कितने मानदंडों की गणना करता है। निकटतम परिवार में पन्द्रह संबंध तीन मानदंडों आयु, लिंग एवं पीढ़ी पर आधारित हैं। परिवार से बाहर असीमित मानदंडों का प्रयोग किया जा सकता है इसलिए संभावित संबंधों की कोई सीमा नहीं है।

यह इस बात का पालन करता है कि मनुष्यों के अंतहीन सार्थक संबंधों का कभी हिसाब नहीं रखा जा सकता। इन्हें वर्गीकृत कर सामान्य प्रकार के रूप में वर्णित किया जा सकता है। फिर भी किसी भी वर्गीकरण का कोई आधार होना चाहिए। सभी विज्ञानों की तरह समाज विज्ञानों में भी जब तक विशेषताओं जो कि महत्वपूर्ण होती है को अलग न किया जाए तो वर्गीकरण व्यर्थ हो जाता है। ये विशेषताएँ कार्य-करण संबंध विश्लेषण को संभव बनाती है। इस कारण सामाजिक संबंधों को सूचित करने वाले पारस्परिक संपर्कों के प्रकार के दृष्टिकोण से वर्गीकृत एवं उन्हें वर्णित किया गया है। पारस्परिक संपर्क के सबसे महत्वपूर्ण प्रकार हैं संघर्ष, प्रतियोगिता तथा सहयोग जिन पर यहाँ विचार किया जाएगा। इनमें से प्रत्येक के कई उप-प्रकार है लेकिन समाज को समझने के लिए पारस्परिक संपर्कों के रूपों को सही समझने की अनिवार्यता दर्शाने के लिए केवल एक मुख्य प्रकार का वर्णन करना ही काफी है।

परिभाषा के अनुसार पारस्परिक सामाजिक क्रिया में संबंध होना शामिल है और संबंधों में अनिवार्यत: भौतिक या संवेदी माध्यम की आवश्यकता होती है। निःसंदेह इसमें एक का दूसरे के शरीर से स्पर्श करना आवश्यक नहीं है लेकिन पारस्परिक रूप से संपर्क करने वाले दो पक्षों के बीच प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संवेदी प्रेरणा होना आवश्यक है। फिर भी भौतिक माध्यम केवल अनिवार्यता है लेकिन यह संबंधों का पर्याप्त आधार नहीं है। लोगों में सामाजिक संबंधों के बिना भौतिक संबंध हो सकते हैं। उदाहरण के लिए तालाब के विपरीत किनारों पर दो कबीले रहते हो और उन्हें एक दूसरे से कुछ नहीं लेना देना होता फिर भी मच्छरों द्वारा उन्हें निरंतर काटा जाता है जो एक से दूसरे कबीले में मलेरिया ले जाते हैं। केवल शारीरिक संबंध नहीं, सार्थक या प्रतीकात्मक संबंध महत्वपूर्ण है। शुभ भावनाएँ हाथ मिलाकर, वाक्य बोल कर, पत्र लिख कर या हंस कर अभिव्यक्त की जा सकती हैं संवेदी प्रेरणाओं और आगे विस्तार करने से सार्थक प्रेरणाएँ बन जाती हैं। एक मृत व्यक्ति की वसीयत उसके वारिसों के साथ अप्रत्यक्ष और कमजोर भौतिक संबंध है परन्तु इसकी सार्थकता की तुलना में उसके भौतिक स्वरूप का कोई महत्व नहीं। जब तक भौतिक या संवेदी संबंध संबंधित व्यक्तियों में सहानुभूति मूलक अर्थ ग्रहण नहीं करता तब तक यह मानवीय अर्थों में सामाजिक नहीं होता। मनुष्यों के सामाजिक व्यवहार में दूसरों की सार्थक प्रतिक्रियाओं के प्रति ग्रहण की गई क्रियाएँ शामिल होती हैं। दूसरे शब्दों में मनुष्य का पारस्परिक संबंध परस्पर संचार संपर्क है।

संचार की एक अनिवार्य विशेषता यह है कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के व्यवहार (चाहे आवाज, संकेत या भंगिमा हो) से परिणाम निकाल लेता है कि दूसरा व्यक्ति क्या विचार या भावना संचारित करना चाहता है। वह उसी व्यवहार की नहीं अपितु, समझे गए विचार या भावना के प्रति अपनी प्रतिक्रिया अभिव्यक्ति करता है। तब दूसरा व्यक्ति उस विचार या भावना के अर्थ के संदर्भ में उसके उत्तर के प्रति अपनी प्रतिक्रिया करता है। जब कोई लड़की फूल लेती है तो वह उन्हें देखती और सूंघती है लेकिन उसकी मुख्य रुचि उन फूलों को भेजने वाले व्यक्ति और उसके मंतव्य में होती है। क्या वे झगड़ा समाप्त करने के लिए, या वर्षगांठ मनाने के लिए, या अपना वायदा करने के लिए या अल विदा कहने के लिए या रोग से अच्छा होने की शुभ कामनाओं के लिए भेजे गए है? जब तक वह इन प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सकती उसे परेशानी रहेगी क्योंकि उसे पता नहीं होगा कि क्या किया जाए। यह पारस्परिक अपेक्षाओं की व्यवस्था में शामिल व्यवहार के अर्थ होते हैं जैसा कि पहले वर्णन किया गया है कि यह पारस्परिक संपर्क की स्थिति में मौजूद होता है।

अब यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि पारस्परिकता के प्रकारों के वर्गीकरण में सामाजिक संबंध के सार्थक स्वरूप का ध्यान रखना चाहिए।

## सामाजिक पारस्परिक क्रिया के रूप

### संघर्ष

संघर्ष प्रक्रिया का वर्णन कम किया जाता है लेकिन इसका व्यापक अस्तित्व है। इसकी उत्पत्ति तब होती है जब कोई व्यक्ति या समूह दूसरे प्रतियोगियों को पीछे छोड़कर नहीं; अपितु उन्हें प्रतियोगिता में भाग लेने से रोक कर, कुछ प्राप्त करना चाहता है।

इसे औपचारिक रूप से प्रतियोगियों को समाप्त कर या क्षीण कर लाभ प्राप्त करने की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाता है।

संघर्ष मानव संबंधों में निरंतर बनी रहने वाली प्रक्रिया है। उद्देश्यों पर सहमति हो जानेपर इसे हल किया जा सकता है लेकिन साधनों के प्रश्न पर यह समस्या फिर खड़ी हो जाती है। आप एक बड़ा प्रश्न कर सकते हैं कि संघर्ष मानव समाज की लगातार इतनी बड़ी विशेषता क्यों बना हुआ है। इसका उत्तर मानव समाज के नैसर्गिक स्वरूप में निहित है। मानव समाज कोई पक्की संघटित चीज नहीं है अपितु यह एक ढीला-ढाला संघटन है और यह संघटन भी जैविक नहीं, मानसिक स्तर पर होता है। इसे पुन: जीवित करना पड़ता है तथा मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया जैसे प्रशिक्षण, प्रेरणा और दोहराने के द्वारा निरंतर बनाए रखा जाना आवश्यक है। यह सदस्यों के

स्तर पर किसी न किसी रूप में एक समान और अतिरिक्त वैयक्तिक उद्देश्यों पर निर्भर करता है। ये उद्देश्य मनुष्यों के जैविक आधार पर नहीं अपितु अपने साथियों के साथ संप्रेषण संबंधों के आधार पर ही हो सकते हैं। इसी कारण ये एक समाज से दूसरे समाज में व्यापक रूप से भिन्न-भिन्न होते हैं क्योंकि ये संस्कृति की भिन्नताओं से संबद्ध होते हैं। इस प्रकार ये संघर्ष अपनी अपनी पसंद के अनुसार विभिन्न संस्कृति और अपने अपने मुख्य उद्देश्यों वाले लोगों को पसंद/नापसंद करने का प्रथम आधार बना देते हैं। एक ही उद्देश्य वाले लोग आपस में एकत्रित हो जाते हैं और परस्पर एक जैसा पाते हैं। जबकि जिनके अलग उद्देश्य होते हैं वे भी ऐसा ही करते है। इसके अतिरिक्त एक सामाजिक समूह का सम्मिलित स्वरूप, एक नाम, एक आम नेतृत्व, एक दृढ संरचना तथा भाई-चारे की भावना होती है। प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को सम्मिलित अस्तित्व की पहचान बताते हैं और इसके प्रति निष्ठा के मुख्य कर्त्तव्य को निभाते हैं। चाहे वह कोई गोत्र, कबीला, स्थानीय प्रशासन, धार्मिक संगठन या राष्ट्र हो।

### संघर्ष के प्रकार

मानव संबंध के प्रत्येक स्तर पर संघर्ष विभिन्न तरीकों से और विभिन्न मात्रा में प्रकट होते हैं। सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में परिवर्तनों के साथ इसके रूपों में हमेशा परिवर्तन होता रहता है। सामाजिक संघर्ष में वे सभी गतिविधियाँ शामिल होती हैं जिनमें प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से किसी भी उद्देश्य के लिए संघर्ष करने लगता है। इसके दो नैसर्गिक प्रकार हैं- प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संघर्ष

#### i) प्रत्यक्ष संघर्ष

जब व्यक्ति या समूह किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक-दूसरे को निष्फल करते या रोकते या बाधा डालते हैं या घायल करते है तो प्रत्यक्ष संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। लक्ष्य प्राप्ति की अर्थ प्राप्ति या कुठा मुकदमा, विवाद और दुष्प्रचार गतिविधियों के रूप में प्रकट होते है और अधिक हिस्सा प्राप्त करने के लिए संगठित आर्थिक समूहों का अत्यधिक संघर्ष होता है।

#### ii) अप्रत्यक्ष संघर्ष

जब व्यक्ति या समूह एक दूसरे के प्रयासों को वास्तव में तो नहीं रोकते लेकिन फिर भी अपने उद्देश्य ऐसे तरीकों से पूरे करते हैं जो दूसरों को वे उद्देश्य प्राप्त करने मे बाधा बनते हैं। इससे अप्रत्यक्ष संघर्ष उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसे इच्छित उद्देश्य प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों के बीच होने वाली प्रतियोगिता अवैयक्तिक संघर्ष बन जाती है जो आपूर्ति में सीमित होते है जैसे आमदनी या शैक्षिक सम्मान या सामाजिक सम्मान या फिर सुन्दर स्त्री। यह प्रतियोगिता ऐसे लक्ष्य प्राप्त करने में दूसरे के प्रयासों में प्रत्यक्ष रूप से तो हस्तक्षेप नहीं करती परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से दूसरे व्यक्ति की सफलता में बाधा डालती है।

इन दोनों रूपों में अंतर करते समय पाठक को यह ध्यान रखना चाहिए कि हो सकता है सभी प्रकार के संघर्ष दोनों में से किसी भी प्रकार के सामाजिक संघर्ष न हों। हम अपने साथियों के साथ कठिनाइयों को नियंत्रित करने, बाधाओं को दूर करने तथा लक्ष्यों को संघर्ष के अलावा अन्य तरीकों से प्राप्त करने के लिए भी संघर्ष करते हैं। इस-विषय में व्यक्ति का भौतिक वातावरण के साथ संघर्ष होता है। व्यक्ति के विरुद्ध व्यक्ति या समूह के विरुद्ध समूह के संघर्ष अथवा सामाजिक संघर्ष से पता लग जाता है कि वहाँ समाज का अस्तित्व है। लेकिन जहाँ संघर्ष की तुलना में सहयोग की अधिकता नहीं होगी वहाँ समाज नहीं टिक सकता।

### संघर्ष को रोकने की प्रणाली

निःसंदेह संघर्ष को शांत करने के लिए सामाजिक प्रणालियाँ हैं। इनमें से एक है हंसी जो तनाव को समाप्त कर देती है अन्यथा इसका शारीरिक हिंसा में विस्तार हो सकता है। दूसरी प्रणाली है सामाजिक दूरी या बचना। तीसरी प्रणाली है मनोभाव निर्माण जो विरोधी पक्षों के हितों में संघर्ष पर नियंत्रण कर लेते हैं। चौथी प्रणाली है भिन्नता और परिवर्तन यदि यह ज्ञात हो जाए कि विद्यमान स्थिति स्थाई नहीं है तो वह सहन कर ली जाती है। पाँचवी प्रणाली संगठित प्रतिद्वन्द्वता है जो संघर्ष को प्रेरित करने, समूह के प्रति गहन निष्ठा जताने, दूसरों की शक्ति समाप्त करने के लिए प्रचार का अवसर प्रदान करती है और चूंकि पारस्परिक संबंधों का निर्धारित स्वरूप और निश्चित उद्देश्य होता है इसलिए यह शक्ति या ऊर्जा को हानि रहित रूप या समाज के लाभार्थ विस्तार का अवसर प्रदान करती है।

फिर भी यह स्पष्ट है कि ये प्रणालियाँ सार्वभौमिक रूप से सफल नहीं हैं। हंसी मजाक, सामाजिक दूरी, आदर्श मनोभाव, सामाजिक परिवर्तन तथा संगठित प्रतिद्वन्दिता कई बार संघर्ष को रोकने की अपेक्षा बढ़ा देते है। यह सच्चाई है कि सभी परिस्थितियों में संघर्ष के तत्व मौजूद रहते है क्योंकि व्यक्तियों के उद्देश्यों में भिन्नता किसी न किसी हद तक हमेशा बनी रहती है। संघर्ष मानव समाज का एक हिस्सा है। क्योंकि मानव समाज का स्वरूप ही ऐसा है।

## प्रतियोगिता

संघर्ष का उद्देश्य विरोधी को समाप्त करना या उसे हटा देना है। इसके विपरीत प्रतियोगिता का अर्थ सहज रूप से प्रतियोगी को परस्पर सहमत हुए लक्ष्य की प्राप्ति में हराना है। इस प्रकार यह संघर्ष का सुधरा हुआ रूप है। इसका अभिप्राय यह है कि खेल के कुछ नियम हैं जिनका प्रतियोगियों को पालन करना पड़ता है और इन नियमों को न्यायोचित ठहराने और पालन करने का उद्देश्य उन मूल्यों को बनाए रखना है जो प्रतियोगिता की उपलब्धि से अधिक श्रेष्ठ हैं। इसमें बल प्रयोग की भी गुजांइश नहीं होती। नियमों की ऐसी व्यवस्था की जाती है कि धोखाधड़ी या

शारीरिक बल को छोड़ अन्य तरीकों से भी उद्देश्य प्राप्त किए जा सकते है। एक उदाहरण देखें : यदि कोई चेन का थोक विक्रेता कम दर से माल बेच कर स्थानीय दुकानदारों का व्यापार समाप्त करता है तो यह प्रतियोगिता है। यदि दूसरी तरफ छोटे दुकानदार चेन के थोक विक्रेता के कारण सरकार को उस पर शुल्क लगाने के लिए प्रेरित करते हैं तो यह प्रतियोगिता नहीं है क्योंकि फिर राज्य अपनी शक्तियों का जबरदस्ती प्रयोग करेगा। प्रतियोगिता के नियम प्रतियोगी को उद्देश्य प्राप्त करने में अन्य साधनों के उपयोग को वर्जित करते हैं। उनका उद्देश्य जोर जबर-दस्ती और धोखाधड़ी को समाप्त करना है। जब प्रतियोगिता नियमों को तोड़ कर की जाती है तो यह स्वत: संघर्ष में परिवर्तित हो जाती है।

सीमित मात्रा में आपूर्ति वाली चीजों को प्राप्त करने का संघर्ष प्रतियोगिता है जैसे धन, वस्तुएँ, हैसियत, अधिकार और प्यार या अन्य कोई चीज। इसे औपचारिक रूप से विरोधियों को पीछे छोड़ कर प्राप्त करने की प्रक्रिया का पालन करने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। प्रतिस्पर्धा/प्रतियोगिता सभी समाजों में विद्यमान तो रहती है लेकिन विभिन्न समाजों में इसकी मात्रा मे काफी भिन्नता होती है। प्रचंड प्रतियोगी (Kwakiute) क्वाकियूल और अपेक्षाकृत गैर प्रतियोगी जूनी (Zuni) में आकाश-पाताल का अंतर होता है। क्वाकियूतल Kwakiute कार्य को धन के साथ मिलाना कठिन है भौतिक आराम प्रदान करने की अपेक्षा मुख्यत: इसका प्रयोग अपनी हैसियत स्थापित करने के लिए किया जाता है। हैसियत के लिए प्रतियोगिता प्रसिद्ध पोलटेक (Potlatch) में उच्चतम स्तर पर पहुँच गई थी जिसमें प्रमुख तथा मुख्य परिवारों में मुकाबला हो गया था कि कौन दूसरे को समाप्त या कितना बर्बाद कर सकता है। एक परिवार पूरा जीवन धन संचय में लगा देता है और अपने बच्चों की सामाजिक हैसियत स्थापित करने के लिए एक बार के पौलटेक में कंगाल हो जाता है। जिन परिवारों के सदस्यों ने अपना धन अपने पास रखा उनकी अपने बच्चों के लिए कुछ न करने के कारण आलोचना की गई। दूसरी तरफ जूनी किसी प्रकार के धन संचय पर जोर देने या व्यक्ति की निपुणता का दिखावा करने से घृणा करती है। अधिकांश धन संपूर्ण समुदाय के द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है और किसी भी व्यक्ति की निपुणता का प्रदर्शन करना 'बुरा' है। इस प्रकार जूनी का बच्चा बड़ा होकर यह विश्वास नहीं करता कि उच्चतम श्रेणी प्राप्त करने या दौड़ में सबसे आगे रहने के लिए अधिक धन संचय करना चाहिए।

क्वाकियूतल में पायी गई प्रतियोगिता को प्रोत्साहन देने का अर्थ यह नहीं है कि सहयोग का पूरी तरह अभाव हो गया था। जैसा कि समाजशास्त्री मार्गेट मीड बताती हैं कि–

"कोई समाज न तो पूरी तरह प्रतियोगी या सहयोगी हो सकता है। प्रचंड प्रतियोगिता वाले समाजों में समूह के अंदर सहयोग विद्यमान रहता है। प्रतियोगी और सहयोगी आदतें समाज में हमेशा रहती है"

### प्रतियोगिता में परिवर्तन

किसी भी सामाजिक व्यवस्था का अनिवार्य भाग प्रतियोगिता विभिन्न समाजों में मात्रा, गहनता और प्रकार के रूप में भिन्न-भिन्न होती है। सोवियत रूस में काफी प्रतियोगिता है। और यही अमेरिका में भी है लेकिन भिन्न प्रकार से है। अमेरीकी प्रकार ने आर्थिक संस्थाओं को निजी संपत्ति, संविदा और खुले बाजार में तथा राजनीतिक संस्थाओं को सरकार के प्रतिनिधित्व में रूपांतरित कर दिया। इसने न केवल प्रतियोगिता के प्रकार को परिभाषित किया अपितु उसे व्यापक अवसर भी प्रदान किया। उन्होंने व्यावसायिक योग्यता के माध्यम से धन संचय के लिए मार्ग खोल दिया।

### समकालीन समाज में प्रतियोगिता

प्रतियोगिता अत्यंत गतिशील होती है। यह प्रेरणा के स्तर को बढ़ा कर, असफलता का डर तथा सफलता की आशा और विरोध का तत्व शामिल कर उपलब्धि के लिए प्रोत्साहित करती है। इस कारण यह विशेष रूप से मनोग्रंथि एवं बदलते समाजों में मजबूत हो गई है।

आजकल समाज में अत्यधिक प्रतियोगिता विद्यमान है। आज व्यक्ति संस्था तथा नियमों की अनदेखी करता है जिससे संपत्ति के बचाव, संविदाओं को लागू करने तथा धोखाधड़ी का बचाव के लिए प्रतियोगिता की जाने लगी है। वह प्रतियोगिता रहित सामूहिक उद्देश्यों और मूल्यों की अनदेखी करता है परन्तु वे उनसे श्रेष्ठ होते हैं वह भूल जाता है कि प्रतियोगिता खराब तथा लाभदायक भी हो सकती है। यह अधिक होने पर भूख, भय और असुरक्षा, अस्थिरता और आतंक की तरफ ले जा सकती है। आज हम यह भूल गए हैं कि असीमित प्रतियोगिता अनिवार्यत: एकाधिकार की तरफ ले जाती है। यह शक्तिशाली की सफलता को निर्बल पर अत्यधिक शक्ति की तरफ ले जाती है और असमानता पैदा होती है जिससे मुक्त संविदा का मजाक बन जाता है।

## सहयोग

को-आपरेशन (सहयोग) शब्द लेटिन शब्दों 'को (CO)' तथा 'ऑपरेरी (Oprari)' से बना है। जिनका क्रमश: अर्थ है मिल कर कार्य करना। इसे औपचारिक रूप से एक समान उद्देश्यों या पारस्परिक उपलब्धियों के लिए मिलकर कार्य करने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। सहयोग छोटे से छोटे समूह (दो व्यक्तियों का समूह) तथा संयुक्त राष्ट्र संघ जैसे बड़े समूहों मे भी पाया जाता है। सहयोग में दूसरे लोगों की भावना का सम्मान निहित होता है इसे प्राय: नि:स्वार्थ समझा जाता है। लेकिन लोगों ने देखा है कि उनके स्वार्थ युक्त उद्देश्य भी अपने साथियों के साथ मिल कर कार्य करने से सर्वोत्तम ढंग से पूरे होते है।

साझे या एक जैसे उद्देश्य प्राप्त करने के लिए सहयोग और मिलकर कार्य किए बिना व्यक्ति परस्पर संबद्ध नहीं हो सकते। सामाजिक जीवन में सहयोग के अनेक रूपों को दो मुख्य रूपों में विभाजित किया जा सकता है।

i) **प्रत्यक्ष सहयोग** : इस श्रेणी में हम वे गतिविधियाँ शामिल करते हैं जिन्हें लोग मिलकर एक साथ करना पसंद करते है जैसे मिलकर खेलना, पूजा करना, खेत में हल चलाना, असंख्य तरीकों से श्रम करना आदि। ऐसी गतिविधियों में कार्यों की थोड़ी बहुत भिन्नता तो हो सकती है जैसे आप धोइए मैं सुखाता हूँ लेकिन इनका अनिवार्य रूप यह है कि लोग वे कार्य दूसरों के साथ मिलकर करते हैं जिन्हें वे स्वयं अकेले या एकांत में भी कर सकते हैं। वे मिलकर कार्य करते हैं या तो एक दूसरे की उपस्थिति में उन्हें कार्य करने की प्रेरणा मिलती है या फिर उन्हें किसी दूसरी तरह सामाजिक संतुष्टि मिलती है। प्रत्यक्ष सहयोग का उदाहरण तब भी मिलता है जब वे मिलकर वह कार्य करते हैं जो उनमें से किसी के द्वारा भी अकेले करना कठिन होता जैसे वे मिलकर एक पंक्ति पर खींचते हैं या किसी बाढ़ पर एक साथ चढ़ाई करते हैं।

ii) **अप्रत्यक्ष सहयोग** : इस श्रेणी में हम वे गतिविधियाँ शामिल करते हैं जिनमें लोग कार्य तो भिन्न-भिन्न करते हैं लेकिन उनका उद्देश्य एक ही होता है। यहाँ पर श्रम विभाजन का सिद्धांत लागू होता है। यह सिद्धांत सामाजिक जीवन के स्वरूप में बहुत अच्छी तरह रचा हुआ है। यह श्रम विभाजन परिवार के पालन में जीवन के प्रजनन में प्रकट होता है। यह तब भी प्रकट होता है जब लोग एक समान उद्देश्य के लिए अपने भेद भूल जाते हैं। उद्योगों में, सरकार में, वैज्ञानिक अनुसंधान में और यहाँ तक कि मनोरंजन गतिविधियों और समारोहों में यह प्रवृत्ति अधिकाधिक विशेष होती जा रही है। यह प्रक्रिया ग्रामीण

## समावेश

जब कभी समूह मिलते है तब संस्कृति का परस्पर कुछ परिवर्तन या प्रसार होता है। यहाँ तक कि जो समूह ऐसे अंतर परिवर्तन या प्रसार से बचना चाहते हैं तो भी वे अपनी संस्कृति को परस्पर होने वाले इन सभी सांस्कृतिक परिवर्तनों से बचने में पूरी तरह सफल नहीं हो पाते। पारस्परिक सांस्कृतिक प्रसार प्रक्रिया के माध्यम से व्यक्तियों और समूहों द्वारा अपनाई गई एक जैसी सांझी संस्कृति को समावेश कहा जाता है। यह हमेशा द्विपक्षीय प्रक्रिया होती है जिसमें प्रत्येक समूह संभावित मिश्रित संस्कृति में अपने समूह के आकार, हैसियत और अन्य तथ्यों के आधार पर भिन्न-भिन्न अनुपात में अपना योगदान करते हैं।

यूरोप से आने वाले आप्रवासी लोगों का अमेरीकीकरण मिश्रित प्रक्रिया का श्रेष्ठ उदाहरण है। 1860 और 1913 के बीच आने वाले अत्यधिक आप्रवासी उत्तरी शहरों की आप्रवासी

कालोनियों में बस गए थे। इन और यहूदी कालोनियों में कुछ इटलीवासी, कुछ पौलेंडवासी और ऐसे अन्य देशों के लोग थे जो अधिकांशत: अपनी यूरोपीय संस्कृति का पालन करते थे तब भी उसमें कुछ अमेरीकी संस्कृति का समावेश था। आप्रवासी अभिभावक प्राय: अपने बच्चों में यूरोपीय संस्कृति संप्रेषित करना चाहते थे लेकिन बच्चे प्राय: यथा संभव शीघ्रता से अमेरीकी संस्कृति अपनाते जा रहे थे। इस अंतर्विरोध के कारण प्राय: अभिभावकों में व्यथा, पारिवारिक विघटन तथा अभिभावकीय देखभाल में कमी आती गई। इससे अनेक दूसरी पीढ़ी के अप्रवासी भ्रमित, विद्रोही और अपराधी हो गए। जैसे ही तीसरी पीढ़ी बड़ी हुई मिश्रण कठिनाइयाँ प्राय: समाप्त हो गई थी और अमरीकीकरण पूरा हो चुका था और गैर यहूदी कालोनी समाप्त हो चुकी थी और वंशज संपूर्ण शहर और नगर में फैल चुके थे (थॉमस और जनानयकी 1927)

"संस्कृतियों का सम्मिलन विभिन्न समूहों को बड़े समूहों तथा सांस्कृतिक सॉमंजस्य समूहों में सम्मिलित करके सामूहिक अंतर विरोधों को कम कर देता है। आइरिस लोगों के विरुद्ध उत्पात प्रचंड और अमेरीका में स्केन डिनेवियनों के विरुद्ध भेदभाव समाप्त हो गए थे क्योंकि सम्मिलिन ने समूह के भेद समाप्त कर दिए थे और पृथक समूह की पहचान की भावना को भुला दिया था। लोगों को बड़े समूह में संबद्ध करने वाली कोई भी चीज उनमें विरोधों और संघर्षों को कम करने वाली होती है। इसे एक प्रयोग द्वारा स्पष्ट रूप से उद्धृत किया जाता है। एक बार ग्रीष्मकालीन कैम्प में विभिन्न समूहों की प्रायोगिक संरचना की गई (शरीफ एंड शरीफ, 1953) सभी लड़के एक ही समुदाय और धर्म तथा एक ही सामाजिक वर्ग, हैसियत, आयु और राष्ट्रीय पृष्ठ भूमि के थे। प्रथम प्रायोगिक अवधि में उन्हें एक ही समूह के रूप में लिया गया और उन्होंने सामाजिक विरोध के कोई आरंभिक लक्षण प्रकट नहीं किए। दूसरे प्रायोगिक अवधि में उन्हें दो समूहों में विभाजित किया गया और अलग-अलग कक्षों में रखा गया तथा अलग-अलग गतिविधियाँ करने के लिए प्रोत्साहित किया गया। समूहों को 'रेड डेविल्स तथा 'बुलडॉग्स' नाम दिया गया। समूहों में विरोध शीघ्र ही उत्पन्न हो गया तथा दोनों समूहों के बीच शारीरिक हिंसा ऐसे बिन्दु पर पहुँच गई कि वरिष्ठ नेताओं को शांत करानी पड़ी।

यह उदाहरण दिखाता है कि वास्तव में कोई भेद या झगड़ने के विषय न होते हुए भी समूह की अलग पहचान स्थापित होते ही संघर्ष आरंभ होने लगते हैं। सम्मिलित संघर्ष के संभावित दबावों में से कुछ को ही हटा पाता है। सबको नहीं।

## सामाजिक नियंत्रण

समाज शास्त्र साहित्य का बहुत बड़ा भाग चाहे किसी भी नाम से हो सामाजिक नियंत्रण से ओत प्रोत है। सामाजिक नियंत्रण का अर्थ वह तरीका है जिसके द्वारा संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था संबद्ध रहती है तथा स्वयं को बनाए रखती है और परिवर्तित होते वातावरण में समग्र रूप से संचालित होती है।

सामाजिक नियंत्रण वे साधन है जिनके द्वारा लोगों को अपेक्षित भूमिका पूरी करने के लिए मार्ग दर्शन दिया जाता है। इसका अध्ययन उस सामाजिक व्यवस्था के अध्ययन से आरंभ होता है जिसमें लोग परस्पर संपर्क करते हैं। एक उदाहरण पर विचार करें क्रमबद्ध व्यवस्थाओं में बड़े शहर की मुख्य अव्यवस्था होती है। लाखों लोग अपने स्थानों पर जाते हैं और बिना किसी प्रत्यक्ष दिशा के अपना कार्य करते हैं। हजारों वाहन तंग मार्गों से अपने रास्ते पर इंचो के अंतराल से चलते हैं लेकिन वास्तव में कभी टकराते नहीं। हजारों प्रकार की वस्तुएँ उचित समय पर उचित मात्रा में सही स्थानों पर पहुँचती है। 10 हजार व्यक्ति जिन्होंने उस एक आदमी को कभी देखा नहीं प्रतिदिन उसके लिए श्रम करते हैं ताकि आवश्यकता के समय उसके लिए भोजन तैयार रहे, पीने का पानी भी चले, नालों से अपशिष्ट पदार्थों, का निकास होता रहे, बल्ब जलते रहे, उसके आवागमन के लिए परिवहन को रोका जाए और विभिन्न सुविधाएँ उसकी आवश्यकता की पूर्ति करती रहें। हो सकता है प्रति घंटे सैकड़ों लोग उसकी सेवा में रहें और शायद वह उनके लिए एक शब्द भी न कहे।

इसी का अर्थ सामाजिक व्यवस्था लोगों की व्यवस्था, संबंध और परंपराएँ हैं जो सामाजिक कार्य पूरी करने के लिए सुचारु रूप से संचालित होती है। जब तक लोग एक दूसरे की अपेक्षाओं के बारे में जानेंगे नहीं तो बहुत कुछ करना कठिन होगा। समाज की व्यवस्था उन भूमिकाओं के नेटवर्क पर निर्भर करती है। जिन्हें व्यक्ति दूसरे के प्रति अपना कर्त्तव्य समझते हैं और दूसरों से कुछ अधिकारों की अपेक्षा रखते हैं।

पारस्परिक कर्त्तव्यों और अधिकारों का यह नेटवर्क किस आधार पर अपना कार्य करता है? इसके लिए सामाजिक नियंत्रण का प्रयोग कर समाज शास्त्रियों ने वर्णन किया है कि ये वे सभी साधन और प्रक्रियाएँ है जिनके द्वारा कोई समूह या समाज अपनी अपेक्षाओं के अनुरूप अपने सदस्यों को सुरक्षा प्रदान करता है।

कोई समूह या समाज अपने सदस्यों से अपेक्षित व्यवहार कैसे करवाता है? अनेक प्रकार से इनका संबंधित महत्व आँकना कठिन होता है।

**सामाजिक नियंत्रण के विभिन्न प्रकार निम्नलिखित है –**

**1) समाजीकरण के माध्यम से सामाजिक नियंत्रण**

मुख्यत: लोगों को समाजीकरण के द्वारा नियंत्रित किया जाता है ताकि वे अपनी आदतों और प्राथमिकताओं के माध्यम से अपेक्षित भूमिकाएँ पूरी कर सकें। हमारे समाज में परिवारों में महिलाओं को किस प्रकार अधिक महत्व देने की प्रकृति पाई जाती है? कैसे व्यक्ति बच्चों में मुख्यत: भूमिकाओं एवं दायित्वों को संप्रेषित करने का दायित्व अपने पर लेते हैं? सामाजीकरण

हमारी परंपराओं, इच्छाओं और आदतों को स्वरूप प्रदान करता है। समाज के सदस्यों को उन्हीं परंपराओं में प्रशिक्षित किया जाता है तथा उनमें उन्हीं आदतों को अच्छी तरह विकसित करने की प्रवृत्ति रहती है। इस प्रकार समूह के अंदर व्यवहार की आदतों और परंपराओं का एक ही मानक बन जाता है। यदि समाज के सभी सदस्य एक जैसे सामाजिक अनुभव रखते हैं तो वे स्वेच्छा से बिना झिझके वैसे ही कार्य व्यवहार करेंगे। वे जो कुछ करना चाहते है बिना सोचे समझे सामाजिक अपेक्षाओं के अनुरूप करेंगे।

### 2) सामूहिक दबावों के माध्यम से सामाजिक नियंत्रण

अधिकतर समाजशास्त्री सामाजिक नियंत्रण को अपने आरंभिक समूहों में स्थिति प्राप्त करने की व्यक्तियों की आवश्यकताओं से उपजी एक मुख्य प्रक्रिया के रूप में देखते हैं। लापीयर (1954) का दावा है कि जब ये समूह छोटे और घनिष्ठ होते हैं तो सर्वाधिक प्रभावी होते हैं और व्यक्ति समूह में दीर्घावधि तक रहने की आशा करते हैं और परस्पर बार-बार संपर्क होता है। सभी विद्वान इस बात से सहमत है कि घनिष्ठ समूह में स्वीकार किए जाने की हमारी आवश्यकता समूह के नियमों के प्रति सामूहिक दबाव के प्रयोग का सर्वाधिक शक्ति शाली साधन है।

समाज शास्त्री (शरीफ 1935; बोवार्ड, 1951) ने अनेक प्रयोग किए है कि किस प्रकार व्यक्ति समूह के नियमों के अनुरूप अपनी अभिव्यक्ति करता है। इन प्रयोगों में प्राय: सदस्यों से किसी विषय पर अपने अनुमान, मनोवृत्तियाँ या विचार प्रस्तुत करने के लिए कहा गया तथा इसके बाद उन्हें समूह के नियमों के बारे में बताया गया और अंत में प्रत्येक सदस्य से नई अभिव्यक्ति देने के लिए कहा गया। अनेक सदस्यों ने समूह नियमों के अनरूप अपनी दूसरी अभिव्यक्ति में परिवर्तन किया। संकेचर (1951) में एक प्रयोग में दर्शाया है कि जिन सदस्यों ने समूह के नियमों से एक दम भिन्न विचार प्रकट किए थे उन्हें समूह द्वारा हटा दिया गया। हम प्राय: देखते हैं कि समूह का नया सदस्य पुराने सदस्यों की अपेक्षा समूह के नियमों का अधिक ध्यान से अनुकरण करता है तथा अधिक निष्ठावन होता है। समूह में स्वीकृति और हैसियत प्राप्त करने के लिए उच्च अनुरूपता एक साधन है तथा अनुरूप न होने के कारण सदस्यता भंग की जा सकती है।

#### क) अनौपचारिक प्राथमिक समूह नियंत्रण

प्राथमिक और द्वितीयक दो प्रकार के समूह होते हैं। वर्तमान चर्चा में यह ध्यान रखना काफी है कि प्राथमिक समूह छोटे, घनिष्ठ, अनौपचारिक तथा आमने सामने वाले होते हैं, जैसे परिवार, गुट या खेल समूह। जबकि बड़े समूह बड़े, अपेक्षाकृत अधिक अवैयक्तिक, औपचारिक और अधिक उपयोगी होते हैं जैसे श्रमिक यूनियन, ट्रेड एसोसिएशन, धर्म समूह या छात्र संघ आदि।

प्राथमिक समूहो में नियंत्रण अनौपचारिक, तात्कालिक एवं अनियोजित होता है। समूह के सदस्य प्रत्येक सदस्य के कार्य पर प्रतिक्रिया करते है। जब एक सदस्य नाराज होता हैं या क्रोध करता

है तो अन्य सदस्य विरोध, हंसने, आलोचना या यहाँ तक कि बहिष्कार द्वारा अपनी असहमति दर्शा सकते हैं। जब किसी सदस्य का व्यवहार स्वीकार्य होता है तो स्वीकारिता, सुरक्षा और सहज संबद्धता उसका पुरस्कार होता है।

सामाजिक नियंत्रण के अनौपचारिक रूप है लोक तरीके और लोक प्रथाएँ जो किसी समाज या समूह के नियमों या तरीकों के द्योतक होते हैं ये हमें क्या करने या न करने के प्रचलित या अधिकतम स्वीकृत या मानक तरीके बताते हैं। ये व्यक्ति और समूह पर नियमों की अनुरूपता के लिए नियंत्रणकारी पर्याप्त दबावकारी होते हैं। सामाजिक जीवन में लोक प्रथाओं के सामान्य कार्य होते हैं :

क) लोक प्रथाएँ हमारे अधिकतर वैयक्तिक व्यवहार का निर्धारण करती हैं। ये सामाजिक जीवन के बाध्यकारी और वर्जनात्मक साधन हैं जो प्रत्येक सदस्य पर निरंतर प्रभावी दबाव बनाए रखती हैं।

ख) लोक प्रथाएँ समूह में व्यक्तियों की पहचान रखती हैं। एक तरफ यदि लोक प्रथाएँ व्यक्ति पर अपने समुदाय या सामाजिक वर्ग या लिंग के अनुरूप पालन करने का दबाव बनाती हैं तो दूसरे तरफ अनुरूपता के द्वारा व्यक्ति अपने साथियों के साथ अपनी पहचान बनाते हैं। इस से वह सामाजिक संबद्धताएँ प्राप्त करता है जो संतोषप्रद जीवन के लिए स्पष्टत: अनिवार्य है।

पारंपरिक भारतीय समाज में अपने सदस्यों पर कठोर नियंत्रण करने वाली तीन सामाजिक संस्थाएँ है संयुक्त परिवार, जाति प्रथा और पंचायत पहले इन तीनों के संदर्भ में अनुरूपता न होना बहुत बड़ी घटना मानी जाती थी। औद्योगीकरण और आधुनिकीकरण का उदय होने के कारण ये सामाजिक संस्थाएँ विघटित होने लगी और अनौपचारिक नियंत्रण के स्थान पर अनौपचारिक नियंत्रण आरंभ हो गया।

ग) द्वितीयक समूह नियंत्रण

जैसे ही हम प्राथमिक समूह से द्वितीयक समूह की स्थितियों में आते हैं तो अनौपचारिक नियंत्रण से औपचारिक नियंत्रण के रूपों में प्रवेश कर जाते हैं। द्वितीयक समूह प्राय: बड़े अधिक अवैयक्तिक और विशेष उद्देश्य वाले होते हैं। हम इनका प्रयोग घनिष्ठ मानव उपलब्धियों की आवश्यकता पूरी करने के लिए नहीं अपितु कुछ कार्यों में सहायता के लिए करते हैं। यदि कोई द्वितीयक समूह हमारी आवश्यकताएँ पूरी नहीं करता तो हम प्राय: बिना अधिक अफसोस के उसे छोड़ सकते हैं क्योंकि हमारा उससे अधिक भावात्मक लगाव नहीं होता। परवर्ती समूह में अपनी हैसियत बनाने की इच्छा तो होती है लेकिन आरंभिक समूह में जितनी अधिक गंभीर भावात्मक

आवश्यकता नहीं होती। यह सत्य है कि हमारे समाज में लोग अपने परिवार छोड़कर, अपने जीवन साथी से विवाह विच्छेद कर तथा नए मित्र बनाकर अपने आरंभिक समूहों को छोड़ सकते हैं लेकिन प्रक्रिया प्रायः काफी कष्टदायक होती है। द्वितीयक समूह प्राथमिक समूह की तुलना में कम बाध्यकारी होते हैं।

फिर भी द्वितीयक समूह का प्रभावशाली नियंत्रण होता है। द्वितीयक समूहों में भी कुछ अनौपचारिक नियंत्रण रहता है। कोई सामान्य व्यक्ति यूनियन की बैठकों का चेम्बर ऑफ कॉमर्स के भोज में उपहास का पात्र विचित्र नहीं बनना चाहता। ऐसे अनौपचारिक नियंत्रण जैसे उपहास, हंसी, चर्चा का विषय और बहिष्कार द्वितीयक समूहों में कुछ कम प्रभाव से विद्यमान होते हैं। लेकिन द्वितीयक समूहों में अधिक औपचारिक नियंत्रण होते हैं जैसे कानून के संसदीय नियम, सरकारी विनियम और मानक प्रक्रियाएँ, प्रचार, पदोन्नति एवं सम्मान एवं पुरस्कार, औपचारिक जुर्माना तथा सजा आदि।

3) बलात् नियंत्रण

अनेक प्राचीन समाज लोक प्रथाओं और प्राथमिक समूह के प्रबल अनौपचारिक नियंत्रणों के माध्यम से अपने सदस्यों के व्यवहार पर सफलतापूर्वक नियंत्रण करते थे इसलिए औपचारिक कानूनों या सजाओं की आवश्यकता नहीं थी। लेकिन अधिक जनसंख्या और जटिल संस्कृतियों के कारण औपचारिक सरकार, कानून और सजाओं का विकास हुआ। जहाँ कहीं व्यक्ति के भीड़ में गुम होने की संभावना थी अनौपचारिक नियंत्रण अपर्याप्त हो गए तथा औपचारिक नियंत्रण आवश्यक हो गए। जैसे संयुक्त परिवार में प्रत्येक सदस्य के व्यवहार पर नियंत्रण करना तथा किसी के भी दुर्व्यवहार पर सजा देना काफी संभव था। परन्तु हजारों लोगों के नगर में प्रत्येक व्यक्ति पर अनौपचारिक नजर रखना संभव नहीं है। कार्य सौंपने और पुरस्कार प्रदान करने के लिए कोई-व्यवस्था बनाना आवश्यक हो गया। इस प्रकार बड़ी जनसंख्या और सांस्कृतिक जटिलता के कारण अवैयक्तिक परवर्ती समूह के नियंत्रण कानून, विनियम और औपचारिक प्रक्रियाओं में परिवर्तन आ गया।

जब कोई समूह इन विनियमों का पालन नहीं करना चाहता तो समूह उसे पालन करने के लिए विवश करता है। ऐसे बड़े समूहों में वह उस पर अनौपचारिक समूह का दबाव बनाने के लिए वह अज्ञात रहता है। फिर बड़े समूहों में जटिल संस्कृतियों के साथ ऐसी अनेक उप संस्कृतियों का भी उदय होने की संभावना रहती है जिनका बड़ी जनसंख्या की संस्कृति से विरोध हो सकता है। जो व्यक्ति समाज के पारंपरिक विनियमों को अस्वीकार करने लगता है हो सकता है उसे ऐसे व्यक्तियों से भावात्मक समर्थन मिले जो स्वयं ऐसा करना चाहते हैं। यद्यपि उस व्यक्ति पर अभी सामूहिक दबाव हो सकता है लेकिन इस प्रकार वह अनुकरण न करने वाले समूह में आ

जाता है और वे उसे पारंपरिक समाज के दबाव से बचाते हैं। इसलिए पारंपरिक समाज उस पर ताकत/शक्ति का प्रयोग करता है। यह ताकत कानूनों और औपचारिक सजाओं के रूप में होती है जो उसे अनुकरण के लिए विवश करती है।

## सारांश

उपर्युक्त सामाजिक प्रक्रियाएँ सभी समाजों में पाई जाती है लेकिन उनकी गंभीरता में काफी भिन्नताएं होती हैं। सहयोग वैयक्तिक या अवैयक्तिक हो सकता है तथा इसका स्वरूप सुविचारित या प्रतीकात्मक हो सकता है। प्राथमिक समूहों में अत्यधिक वैयक्तिक सहयोग होता है जबकि द्वितीयक समूहों में सामूहिक सहयोग अत्यधिक संगठित सामाजिक समूहों में पाया जाता है।

प्रतियोगिता प्रतियोगियों के बीच दुर्लभ पुरस्कारों को प्रदान करने का उद्देश्य पूरा करती है। इसका एक अतिरिक्त उद्देश्य वैयक्तिक और सामूहिक गतिविधियों को इस ढंग से प्रेरित करना भी है जिससे उत्पादकता में वृद्धि हो लेकिन यह निरंतर असफल होने वालों के प्रयत्नों को निरुत्साहित भी करती है।

प्रतियोगिता से हट कर ध्यान विरोधी को समाप्त करने पर केन्द्रित हो तो संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। सामाजिक संघर्ष को समाप्त करने की विभिन्न प्रणालियों की चर्चा की गई है। दो संस्कृतियों के मिलाप से संघर्षरत दो समूहों के बीच भी संघर्ष कम किया जा सकता है।

फिर सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने की एक प्रणाली के रूप में सामाजिक नियंत्रण की विस्तृत चर्चा की गई है कि बदलते परिवेश में यह कैसे कार्य करता है। इसके आगे सामाजिक नियंत्रण बनाए रखने के विभिन्न रूपों के बारे में भी बताया गया है। व्यक्तियों को समाजीकरण एवं सामूहिक दबावों के माध्यम से भी नियमों के अनुरूप बनाया जाता है। इन आरंभिक समूहों में सामाजिक नियंत्रण के अनौपचारिक रूप जैसे उपहास, हंसी मजाक; लोक प्रथाएं और परंपराएँ आदि महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जब हम परवर्ती समूहों में प्रवेश करते हैं तो सामाजिक नियंत्रण के इन अनौपचारिक रूपों की भूमिकाएँ कम या समाप्त हो जाती है। यहाँ सामाजिक नियंत्रण के अनौपचारिक रूपों के स्थान पर औपचारिक रूप जैसे नियम, विनियम कानून और सजा आदि लागू हो जाते हैं।

## कुछ उपयोगी पुस्तकें

बोगार्डस, एमरे एस; (1946). "*द लॉंग ट्रेल ऑफ को ओपरेशन.*" सोशयोलाजी एंड सोसयल रिसर्च, सितम्बर, *ए नेचुरल हिस्ट्री ऑफ द प्रोसेस ऑफ को-ओपरेशन।*

डेविस के. (1954). "*ह्यूमैन सोसायटी.*" मैकग्रा-हील बुक के न्यूयार्क।

मैकसाइवर एंड पेजे, "*सोसायटी; एन इन्ट्रोडक्टरी एनेलीसीस*" मैकमिलन प्रैस लि. लंदन।